

समाज विकासमाला

संत ज्ञानेश्वर

सस्ता साहित्य मण्डल प्रकाशन

समाज-विकास-माला : ४५

संत ज्ञानेश्वर

महाराष्ट्र के महान् संत की कहानी

लेखक
श्रीपाद जोशी

संपादक
यशपाल जैन

१९५७
सस्ता साहित्य मंडल-प्रकाशन

प्रकाशक
मार्तण्ड उपाध्याय
मंत्री, सस्ता साहित्य मण्डल
नई दिल्ली

दूसरी बार : १९५७
मूल्य
छः आना

मुद्रक
हिंदी प्रिंटिंग प्रेस
दिल्ली

समाज-विकास-माला

हमारे देश के सामने आज सबसे बड़ी समस्या करोड़ों आदमियों की शिक्षा की है। इस दिशा में सरकार की ओर से यदि कुछ कोशिश हो रही है तो वही काफी नहीं है। यह बड़ा काम सबकी सहायता के बिना पार नहीं पड़ सकेगा।

बालकों तथा प्रौढ़ों की पढ़ाई की तरफ जब से ध्यान गया है, ऐसी किताबों की मांग बढ़ गई है, जो बहुत ही आसान हों, जिनके विषय रोचक हों, जिनकी भाषा मुहावरेदार और बोलचाल की हो और जो मोटे टाइप में बढ़िया छपी हों।

यह पुस्तक-माला इन्हीं बातों को सामने रखकर निकाली गई है। इसमें कई पुस्तकें निकल चुकी हैं। इन सबकी भाषा बड़ी आसान है। विषयों का चुनाव बड़ी सावधानी से किया गया है। छपाई-सफाई के बारे में भी विशेष ध्यान रक्खा गया है। हर किताब में चित्र भी देने की कोशिश की है।

यदि पुस्तकों की भाषा, शैली, विषय और छपाई में उन्हें सुधार की गुंजाइश मालूम हो तो उसकी सूचना निस्संकोच देने की कृपा करें।

दूसरा संस्करण

बड़े हर्ष की बात है कि इस पुस्तक का दूसरा संस्करण इतनी जल्दी प्रकाशित हो रहा है। इस माला की सभी पुस्तकें पाठकों को पसंद आ रही हैं, इससे हमें बड़ा आनंद होता है। हमें विश्वास है कि इन सामयिक और उपयोगी पुस्तकों को पाठक चाव से पढ़ेंगे और इनके प्रचार में हाथ बटाएंगे।

—मंत्री

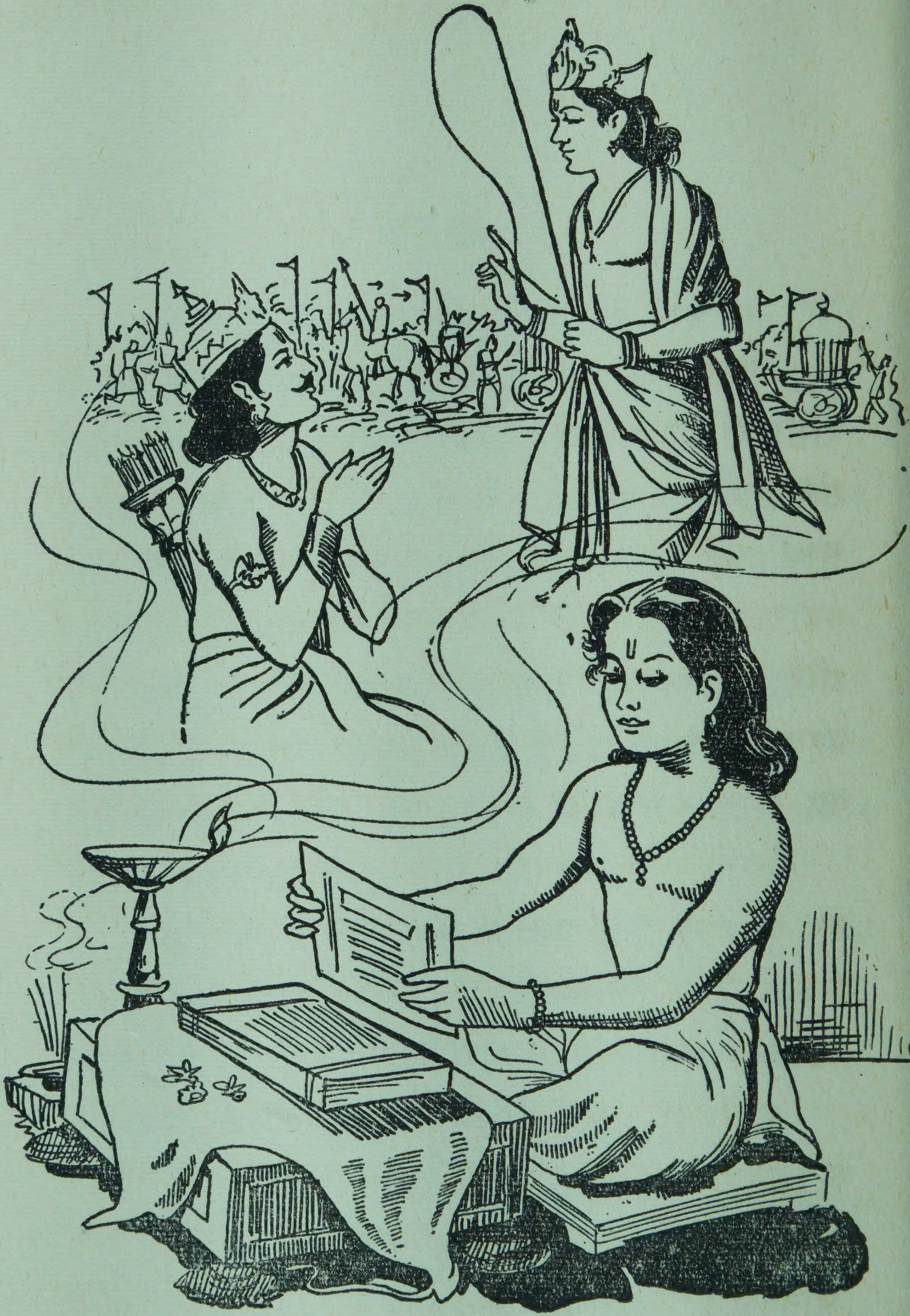
पाठकों से

इस माला में आप कई संतों के परिचय और उनकी वाणी पढ़ चुके हैं। इस पुस्तक में संत ज्ञानेश्वर से परिचय कीजिए और उनकी वाणी का रस लीजिए। ज्ञानेश्वर महाराष्ट्र में जन्मे थे, लेकिन उनका जीवन सारे देश को सीख देनेवाला है और उनकी 'ज्ञानेश्वरी' सबके लिए लाभ की है।

ज्ञानेश्वर के जीवन में कुछ चमत्कारी घटनाएं मिलती हैं। उनसे मालूम होता है कि वह कितने ऊँचे दर्जे के आदमी थे और दूसरों के सुख-दुख के साथ कितने घुले-मिले थे।

संतों की जीवनी बड़ी रोचक होती है और उनके वचन कभी-कभी आदमी के जीवन को नई दिशा में मोड़ देते हैं। आप इस पुस्तक को स्वयं ध्यान से पढ़ें और दूसरों को भी पढ़वाएं।

—संपादक



संत ज्ञानेश्वर

संत ज्ञानेश्वर

: १ :

जिस तरह उत्तर भारत में संत तुलसीदास की रामायण घर-घर पढ़ी जाती है, उसी तरह महाराष्ट्र में संत ज्ञानेश्वर की 'ज्ञानेश्वरी' घर-घर बड़े आदर के साथ पढ़ी जाती है। पिछले कोई सातसौ बरसों से महाराष्ट्र में 'ज्ञानेश्वरी' का पठन-पाठन होता आया है और जैसे-जैसे समय बीतता जाता है, उसका महत्त्व बढ़ता जाता है। इन सातसौ बरसों में कई ग्रंथ लिखे गए, मगर 'ज्ञानेश्वरी' की बराबरी कोई नहीं कर सका।

ज्ञानेश्वर का असली नाम ज्ञानदेव था और अपने ग्रंथ में उन्होंने इसी नाम का प्रयोग किया है, मगर बाद में उसका ज्ञानेश्वर नाम चल पड़ा और आज उन्हें सब लोग इसी नाम से जानते हैं।

ज्ञानेश्वर के पिता विट्ठलपंत कुलकर्णी आपेगांव के रहनेवाले ब्राह्मण थे। आपेगांव आजकल के हैदराबाद राज्य के मराठवाड़ा विभाग में मशहूर पैठण (प्रतिष्ठान) नगर के पास है। विट्ठलपंत को बचपन से ही भगवद्-भक्ति और तीर्थयात्रा का शौक था।

घर-गिरस्ती में उनका दिल नहीं लगता था। इसलिए वह हमेशा तीर्थों की यात्रा करते रहते थे।

एक बार वह घूमते-घामते वह आलंदी पहुंच गए, जो पूना से बारह मील पर है। यहाँपर सिधोपंत कुलकर्णी से उनकी भेंट हुई और उनके बहुत कहने तथा सपने में भगवान् की आज्ञा मिलने पर उन्होंने सिधोपंत की पुत्री रुक्मिणी से ब्याह किया। इसके बाद वह आपेगांव वापस चले गए और घर-गिरस्ती में लग गए। मगर उनका दिल फिर उचट गया और वह घर से भागकर काशी पहुंचे। काशी में प्रसिद्ध वैष्णव भक्त रामानंद स्वामी से उनकी भेंट हुई। अपने विवाह के बारे में विट्ठलपंत ने स्वामीजी को कुछ पता न लगने दिया और उनसे संन्यास की दीक्षा ले ली। अब विट्ठलपंत 'चैतन्याश्रम' या 'चैतन्यस्वामी' बन गए। बेचारी रुक्मिणीबाई अपने मायके आलंदी चली गईं। इसी तरह कुछ अर्सा गुजर गया।

एक बार रामानंद स्वामी रामेश्वर की यात्रा के लिए जाते समय आलंदी में रुके। वहां से नजदीक ही एक पीपल का पेड़ था, जो अब भी मौजूद है। उसकी परिक्रमा करने के लिए रुक्मिणीबाई आईं। किसी साधू को देखकर उन्होंनें प्रणाम किया तो अपनी

आदत के अनुसार रामानंद स्वामी ने "पुत्रवती भव" अर्थात्–"तू पुत्रवती हो," कहकर उन्हें आशीर्वाद दिया।

उनके मुंह से यह बात सुनकर रुक्मिणीबाई को हँसी आई और अपनी हालत का खयाल करके दुःख भी हुआ। उन्हें हँसते देखकर रामानंद स्वामी ने पूछा, "क्यों मां, क्या हुआ ?"

रुक्मिणीबाई ने कहा, "महाराज, मेरे पतिदेव तो मुझे छोड़कर चले गए हैं। अब आपके आशीर्वाद का क्या होगा ?"

रामानंद स्वामी के दिल को बड़ा सदमा पहुंचा। उन्होंने रुक्मिणीबाई से सारी बातें विस्तार से पूछीं। सुनते ही उन्हें खयाल आया कि हो-न-हो, 'चैतन्याश्रम' ही विट्ठलपंत है।

इस समय 'चैतन्याश्रम' उनके साथ नहीं था, इसलिए वह रुक्मिणीबाई को संग लेकर सीधे काशी वापस चले गए और वहां पहुंचकर 'चैतन्याश्रम' से पूछताछ की।

"क्या तुम्हारी इस पत्नी ने तुम्हें संन्यास लेने की आज्ञा दे दी थी ?" रामानंद स्वामी ने पूछा।

"जी नहीं !" चैतन्य ने उत्तर दिया।

"तो फिर तुम्हारा यह संन्यास झूठा ही था। अब

जाओ, मेरी आज्ञा से तुम इसके साथ रहो और घर-गिरस्ती चलाओ !" रामानंद ने आज्ञा की।

'चैतन्याश्रम' ने अपनी गलती मानी और फिर विट्ठलपंत बन गए। उसके बाद वह अपनी पत्नी के साथ आलंदी वापस आगए। इससे रुक्मिणीबाई को उजड़ी दुनिया फिर बस गई। मगर संन्यासी के लिए घर-गिरस्ती में आने का कोई रास्ता धर्म में न होने से लोगों ने उनकी नुक्ताचीनी शुरू की। एक तरह से उनका हुक्का-पानी बंद हो गया और वह समाज से अलग पड़ गये।

इस तरह बारह बरस बीत गए। इस बीच विट्ठलपंत और रुक्मिणीबाई को बड़ी तकलीफें उठानी पड़ीं, मगर उन्होंने शांति के साथ हँसते-खेलते सब झेल लीं। वे अपना सारा समय भगवान की भक्ति, रामायण-महाभारत आदि ग्रंथों के वाचन और भजन-कीर्तन में लगाते, इसलिए उनका मन हमेशा शांत रहता।

आखिरकार संवत् १३२६ में रुक्मिणीबाई के एक लड़का हुआ, जिसका नाम उन्होंने 'निवृत्ति' रखा, जो बाद में 'निवृत्तिनाथ' के नाम से मशहूर हुए। उसके दो बरस बाद यानी संवत् १३३१ (सन्

१२७५ ईस्वी) की श्रावणबदी अष्टमी को एक और लड़का हुआ, जिसका नाम उन्होंने 'ज्ञानोबा' या 'ज्ञानदेव' रखा, जो बाद में 'ज्ञानेश्वर' के नाम से प्रसिद्ध हुए। दो बरस बाद 'सोपानदेव' और उसके दो बरस बाद 'मुक्ताबाई' ने जन्म लिया। ये चारों भाई-बहन महाराष्ट्र-संतों की मालिका में बहुत ही श्रेष्ठ माने जाते हैं।

: २ :

बच्चे तो हुए, पर माता-पिता को सुख न मिला। उनकी तकलीफें बढ़ती ही गईं।

ब्राह्मण के लड़के के आठ बरस का होने पर उसका जनेऊ करना जरूरी हो जाता है। इसलिए विट्ठलपंत आलंदी गांव के पंडितों के पास गए और उनसे निवृत्तिनाथ का जनेऊ-संस्कार करने की प्रार्थना की, मगर पंडित महाराज टस-से-मस न हुए। संन्यासी के लड़कों को जनेऊ देने के लिए उनके धर्म में कोई गुंजाइश न थी। इसलिए विट्ठलपंत को निराश होकर लौटना पड़ा।

इन दुःखों को कुछ दिन के लिए भुलाने की इच्छा से विट्ठलपंत अपनी पत्नी और बच्चों को लेकर नासिक त्र्यंबकेश्वर की यात्रा के लिए गए। वहांपर

ब्रह्मगिरि की परिक्रमा करते समय रात को उन लोगों को एक बड़ा भयंकर शेर दिखाई दिया। उसे देखते ही सब तितर-बितर होकर भाग खड़े हुए। श्री निवृत्तिनाथ पास की एक गुफा में घुस गए। वहां गोरखनाथ के शिष्य गहिनीनाथ ध्यान लगाए बैठे थे। निवृत्तिनाथ से उनकी भेंट हुई तो ऐसा लगा, मानों दोनों एक-दूसरे की खोज में ही थे। गहिनीनाथ ने निवृत्तिनाथ को 'रामकृष्ण हरि' का मंत्र दिया और इस तरह बहुत छोटी उम्र में निवृत्तिनाथ साधु बन गए। इन्हीं निवृत्तिनाथ को ज्ञानेश्वर महाराज ने अपना गुरू बनाया और उनसे गुरुमंत्र लिया।

जब ज्ञानेश्वर आठ बरस के हुए तो उनके जनेऊ की बात उठी। विट्ठलपंत फिर पंडितों के पास गए, बहुत गिड़गिड़ाए, पर उन्होंने एक न मानी।

"महाराज, मेरी गलती के लिए आप मेरे बच्चों को क्यों सजा देते हैं ?" विट्ठलपंत ने पूछा।

"क्योंकि यही धर्म है।" पंडितों ने जवाब दिया।

"तो क्या इसके लिए कोई प्रायश्चित नहीं है ?"

"है क्यों नहीं ? जरूर है।"

"तो बताइए, वह क्या है ?" विट्ठलपंत ने आशा-भरे स्वर में पूछा।

"इसके लिए एक ही प्रायश्चित है और वह है देहांत प्रायश्चित ! मर जाना !" पंडितों ने फैसला सुनाया ।

बेचारे विट्ठलपंत ! पंडितों के फतवे के आगे क्या बोलते ? वह अपने छोटे-छोटे बच्चों को भगवान् के भरोसे छोड़कर अपनी पत्नी के साथ प्रयाग चले गए और वहां त्रिवेणी में उन दोनों ने एक साथ जल-समाधि ले ली ।

इस तरह अब बच्चों का बोझ निवृत्तिनाथ पर आ पड़ा । मां-बाप के चले जाने पर बच्चे भी बहुत-कुछ समझने लगे और चारों भाई-बहन आपस में मिल-जुलकर एक-दूसरे के सहारे जीवन बिताने लगे ।

: ३ :

ये चारों बच्चे गांव में भीख मांगकर जो-कुछ मिलता, उसीपर गुजारा करते । मगर कुछ दुष्ट लोगों से इतना भी बर्दाश्त नहीं होता था और वे तरह-तरह से उनको सताते रहते थे । सब बच्चे परेशान हो गए ।

उस गांव में विसोबा नाम का एक ब्राह्मण था । वह उन बालकों को हमेशा नाहक छेड़ता रहता था । एक बार छोटी मुक्ताबाई को परांठे खाने की इच्छा

हुई। वह अपने बड़े भाई से बोली, "ज्ञानोबा भैया, हम लोग आज परांठे बनावें?"

ज्ञानेश्वर बोले, "जरूर ! लेकिन अपने घर में उसके लिए कोई बर्तन कहाँ है?"

"तो तुम कुम्हार के यहां से ले आओ।" बहन ने धीरे-से कहा।

"अच्छा, मैं अभी लाता हूँ।" इतना कहकर ज्ञानदेव कुम्हारों के मुहल्ले में गए। मगर उससे पहले ही विसोबा ने उनकी बात सुन ली थी और उसने कुम्हारों से कह रक्खा था कि, "अगर किसीने भी उन भ्रष्ट लड़कों की किसी तरह की मदद की तो उसको जाति से निकाल दिया जाएगा।"

बेचारे कुम्हार डर गए। उन्होंने ज्ञानेश्वर को कोई बर्तन नहीं दिया।

अपने भाई को खाली हाथ लौटते देख मुक्ताबाई को बड़ा दुःख हुआ। उसने पूछा, "क्यों, क्या हुआ?"

ज्ञानेश्वर ने सारा हाल कह सुनाया। वह छोटी लड़की लंबी सांस लेकर बोली, "जाने दो भैया ! हमारे भाग्य में परांठे हैं ही नहीं !"

"नहीं बहन, ऐसा मत कहो ! लो, तुम मेरी पीठ पर ही परांठे बनाओ !"

इतना कहकर ज्ञानेश्वर महाराज औंधे झुक गए और प्राणायाम के बल से उन्होंने अपनी पीठ को चूल्हे पर के तवे की तरह गरम किया। यह देखकर मुक्ता-बाई ने उसपर परांठे बनाए।



मुक्ताबाई ने ज्ञानेश्वर की पीठ पर परांठे बनाये

उधर विसोबा उन बच्चों की दुर्दशा देखने के लिए दरवाजे तक आगया था। उसने जब यह करा-मात देखी तो वह अवाक् रह गया और उसने आगे बढ़-कर ज्ञानेश्वर महाराज के पैर पकड़ लिये। बाद में यह

विसोबा बड़ा संत हो गया और नामदेव महाराज ने उसको अपना गुरु बनाया।

जब ब्राह्मणों को इस चमत्कार का पता लगा तो उनमें से कुछ इन लड़कों के भक्त बन गये। मगर जबतक उनकी शुद्धि न हो जाती तबतक वे उनके साथ खान-पान का व्यवहार कैसे कर सकते थे? इसलिए उन्होंने उनसे कहा, "आप लोग पैठण (प्रतिष्ठान) चले जाइए और वहां पंडितों से शुद्धि कराइए तो हम आपके साथ संबंध रख सकेंगे।"

उन दिनों पैठण दक्षिण भारत की काशी थी। वहां पहुंचकर ये भाई-बहन पंडितों की सभा में गए और पंडितों के साथ उनकी बहस शुरू हुई।

बहस में ज्ञानेश्वर ने कहा कि परमेश्वर सभी जीवों के अंदर रहता है और एक प्राणी को दुःख देने से दूसरे को भी दुःख होता है। उन्होंने यह भी कहा कि हम सभी उस ईश्वर के अंश हैं।

"तो क्या यहांपर जो भैंसा है उसे पीटने से तुम्हारे शरीर पर उसके निशान दिखाई देंगे?" पंडितों ने ताना देकर पूछा।

"क्यों नहीं? जरूर दिखाई देंगे!" ज्ञानेश्वर महाराज ने उत्तर दिया।

"अच्छा, अभी देखते हैं !" यह कहकर एक हट्टे-कट्टे पंडित ने उस भैंसे को जोर-जोर से कोड़े लगाए और ज्ञानेश्वर के पास आकर बोला, "देखें तुम्हारी पीठ !"

सचमुच ज्ञानेश्वर की पीठ पर कोड़े के निशान बिल्कुल साफ दिखाई दे रहे थे !

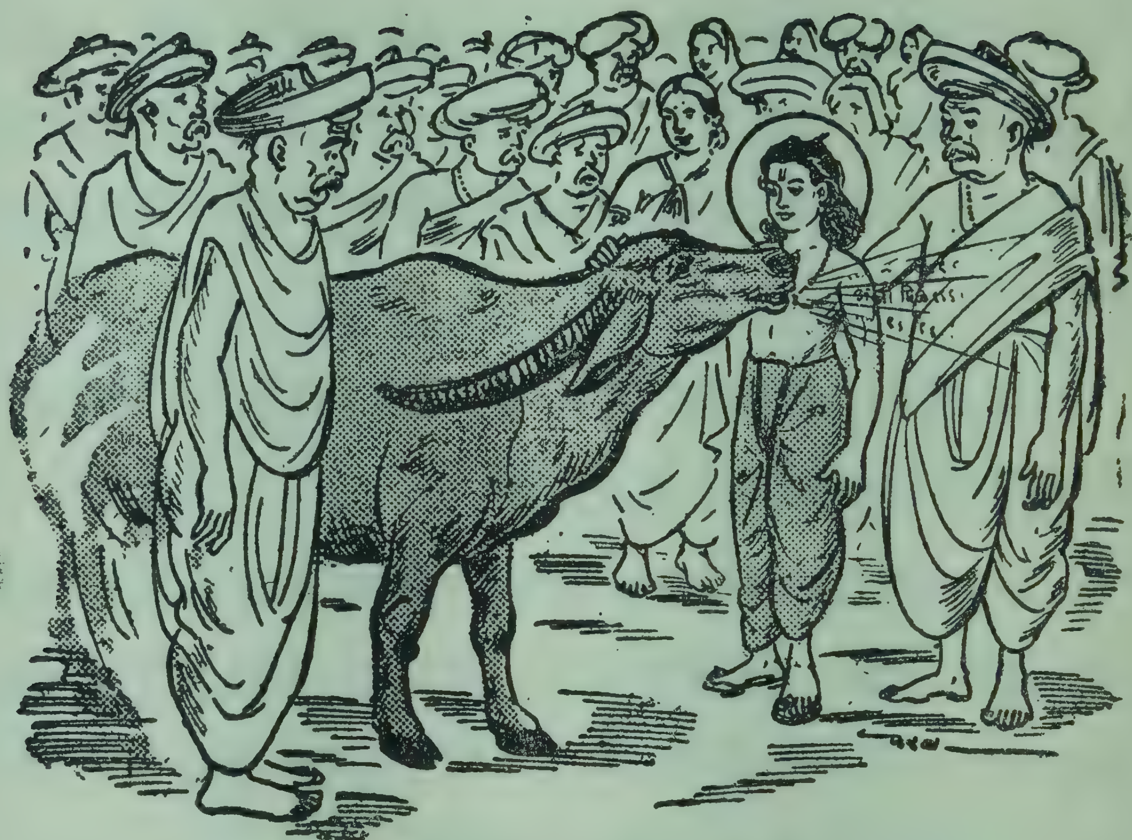
यह करिश्मा देखकर सारे पंडित हैरान रह गए, पर एक ओछे आदमी ने तिनककर कहा, "यह तो जादू-टोना मालूम होता है ! अगर तुममें कुछ सामर्थ्य हो तो इस भैंसे के मुंह से वेद बुलवाओ !"

"जैसी आपकी आज्ञा !" कहकर ज्ञानेश्वर ने उस भैंसे के सिर पर अपना हाथ रखा और बोले, "बेटा, सुनाओ तो इन पंडितों को वेदों के मंत्र !"

और सचमुच वह भैंसा बोलने लगा। उसके मुंह से वेदों के मंत्र निकलने लगे।

यह देखकर पंडितों ने मान लिया कि ज्ञानेश्वर में जरूर भगवान का अंश है और बड़ी खुशी से उनकी शुद्धि कर दी।

लेकिन इसमें एक शर्त्त रखी गई। वह यह कि उन चारों बच्चों में से कोई भी ब्याह-शादी करके अपने वंश को आगे न बढ़ावे। इसका कारण उन्होंने



भैंसा वेदों के मंत्र बोलने लगा।

यह बताया कि अगर यह शर्त्त न रखी गई तो आइंदा कोई भी संन्यास लेने के बाद घर-गिरस्ती बसाने लगेगा और उसके बच्चों को शुद्ध करने का रिवाज चल पड़ेगा।

निवृत्तिनाथ और सोपानदेव इस शर्त्त को मानने के लिए पहले तैयार नहीं थे, मगर ज्ञानेश्वर महाराज ने उनको समझाया कि समाज को बनाए रखने के लिए इस तरह के कड़े बंधन बहुत जरूरी हैं। आखिर सब मान गए और ब्रह्मचारी रहने की शर्त्त पर शुद्धिपत्र प्राप्त करके वे आलंदी जाने के लिए पैठण से निकल

पड़े। उनकी शुद्धि का मतलब सिर्फ इतना ही था कि अब ब्राह्मण लोग उनको अपने साथ भोजन करने देने को तैयार हो गए।

: ४ :

पैठण से चलकर वे भाई-बहन अहमदनगर जिले में नेवासें नामक गांव में पहुंचे। वहाँ पर महालया देवी के मंदिर में संवत् १३४६ (सन् १२९० ईसवी) में ज्ञानेश्वर महाराज ने लगभग सोलह बरस की उम्र में 'ज्ञानेश्वरी' की रचना की। इस ग्रंथ का असल नाम है 'भावार्थ-दीपिका'; लेकिन यह अपने लेखक यानी ज्ञानेश्वर के नाम से ही मशहूर हो गया। श्रीमद्भगवद्-गीता की यह आसान मराठी में व्याख्या है। इसपर आद्य शंकराचार्य के मतों का काफी असर पाया जाता है, मगर उसमें ज्ञान की अपेक्षा भक्ति पर ही ज्यादा जोर दिया गया है। इससे पहले मराठी में बहुत कम कविता लिखी गई थी। इस दृष्टि से तो इस ग्रंथ का महत्त्व है ही, लेकिन जब हम देखते हैं कि गीता का संदेश इतनी अच्छी तरह देनेवाला दूसरा कोई ग्रंथ भारत की किसी भी भाषा में अबतक नहीं लिखा गया है, तो इसकी कीमत हमारी नजरों में कई गुना बढ़ जाती है। गीता के ७०० श्लोकों को समझाने के लिए

ज्ञानेश्वर महाराज ने साखी-जैसी नौ हजार ओवियां इस ग्रंथ में लिखी हैं। इससे समझा जा सकता है कि ग्रंथ कितना बड़ा होगा।

महाराष्ट्र के लिए तो 'ज्ञानेश्वरी' मानो हिमालय पर्वत है, जिसमें से इस प्रदेश को हरा-भरा करने वाली सारी नदियां निकली हैं। संस्कृत भाषा की चहार-दीवारी में बंद अध्यात्म विद्या को आम जनता के लिए ज्ञानेश्वर ने खुला कर दिया, यही इसका बड़प्पन नहीं । साहित्य की दृष्टि से भी इस पुस्तक का बड़ा महत्त्व है। इतनी मंजी हुई भाषा, ऐसे सुंदर अलंकार, इतनी सरलता, शायद ही किसी ग्रंथ में मिले। महा-राष्ट्र में आज सातसौ बरस के बाद भी 'ज्ञानेश्वरी' पढ़ी जाती है और उसके बारे में हर साल बड़े-बड़े ग्रंथ लिखे जाते हैं।

यह 'ज्ञानेश्वरी' ज्ञानेश्वर महाराज ने अपने हाथ से नहीं लिखी थी। वह बोलते जाते थे और सच्चिदानंद बाबा लिखते जाते थे। इन सच्चिदानंद बाबा के बारे में भी एक चमत्कार बताया जाता है।

एक बार ज्ञानेश्वर नहाने के लिए नदी की ओर निकले। इतने में एक स्त्री ने आकर उनको प्रणाम

किया। उन्होंने हमेशा की तरह आशीर्वाद दिया, "मां, तुम्हारा सुहाग हमेशा बना रहे !"

उनके मुंह से यह बात सुनकर स्त्री हँस पड़ी और आँखों से आँसू पोंछते हुए बोली, "आपने शायद अगले जनम की बात कही है।"

ज्ञानेश्वर चौंक पड़े। उन्होंने इधर-उधर देखा तो सामने ही एक अर्थी दिखाई दी। वह झट समझ गए कि यह अर्थी उस महिला के पति की है। उन्होंने लोगों से पूछा, "इनका नाम क्या है ?"

"इन्हें सच्चिदानंद कहते थे !" लोगों ने बताया।

"सच्चिदानंद ? फिर वह कैसे मर सकते हैं ?" इतना कहकर वह अर्थी के पास गए और बोले, "देखो सच्चिदानंद बाबा, इतनी देर से क्यों सोये हो ? उठो जल्दी !"

और सचमुच सच्चिदानंद बाबा उठ बैठे और उन्होंने ज्ञानेश्वर महाराज के पैर पकड़ लिये। इन्हीं सच्चिदानंद बाबा ने 'ज्ञानेश्वरी' लिखी।

ज्ञानेश्वर महाराज से पहले भी कुछ थोड़ी-सी कविता मराठी में लिखी गई थी; लेकिन मराठी में जो सामर्थ्य ज्ञानेश्वर ने प्रकट की वह आजतक बेजोड़ है। मराठी भाषा के प्रति उनका प्रेम भी देखते बनता

। आज भी लोग उनकी इन ओवियों को मराठी भाषा की महत्ता के सबूत में पेश करते हैं--

माझा म-हाठाचि बोलु कौतुकें ।
परि अमृतातें ही पैजा जिंके ।
ऐसी अक्षरें रसिकें ।
मेळवीन ॥
जिये कोंवळिकेचेंनि पाडें ।
दिसती नादींचे रंग थोडे ।
वेधें परिमळाचें बीक मोडे ।
जयाचे नि ।
ऐका रसाळपणाचिया लोभा ।
कीं श्रवणींचि होती जिभा ।
बोलें इंद्रियां लागे कळंभा ।
एक मे कां ॥ (६--१४, १५, १६)

"मैं मराठी शब्दों का ही प्रयोग कर रहा हूं, पर वे ऐसे रसपूर्ण और चुने हुए होंगे कि मिठास में वे अमृत को भी आसानी से हरा देंगे। इन शब्दों के कोमल गुण के साथ तुलना करने पर गायन के सुरों की कोमलता फीकी पड़ जाएगी। इनके मोहक गुणों के आगे सुगंध की बड़ाई भी कम मालूम होगी। इनकी सरसता इतनी अधिक है कि कानों के भी जीभें निकल

आएंगी। और सब इंद्रियां आपस में झगड़ने लगेंगी कि हम ही इस रस को चखेंगी।"

इस ग्रंथ के आखिर में ज्ञानेश्वर महाराज भगवान से प्रार्थना करते हैं या प्रसाद-दान मांगते हैं :

"जे खळांची व्यंकटी सांडो।
तयां सत्कर्मी रती वाढो
भूतां परस्परें पडो।
मैत्र जीवाचें॥
दुरिताचें तिमिर जावो।
विश्व स्वधर्म सूर्यें पाहो।
जो जें वांछील तो तें लाहो।
प्राणिजात"

"दुष्टों को बुरी नजर अच्छी हो जाय, उनके हृदय में सत्कर्म के लिए प्रेम बढ़े और सब जीवों में एक-दूसरे के साथ सच्ची मित्रता हो जाय। पाप का अंधकार नष्ट हो और विश्व में स्वधर्म सूर्य का उदय हो। जो कोई जो कुछ चाहे, वह उसे मिले।"

यह ग्रंथ घर-घर तो पढ़ा जाता ही है, ऊँची कक्षाओं में भी इसकी पढ़ाई होती है। महाराष्ट्र में पिछले सातसौ बरसों से गीता का जो पठन-पाठन हो रहा है, उसका बहुत-कुछ श्रेय इस 'ज्ञानेश्वरी' को भी

दिया जा सकता है। आचार्य विनोबा भावे ने 'गीताई' नाम से मराठी में गीता का समश्लोकी अनुवाद किया है, वह भी इतना ही पसंद किया जा रहा है। लोग कहने लगे हैं कि 'ज्ञानोबा से विनोबा' तक महाराष्ट्र ने गीता के अर्थ में ही डुबकियां लगाई हैं। जो हो, सोलह बरस के लड़के द्वारा लिखा गया इतना महत्त्व-पूर्ण ग्रंथ दुनिया की किसी भी भाषा में शायद ही मिले।

ज्ञानेश्वर महाराज ने 'अभंग' के ढंग के भजन भी लिखे हैं और खूब लिखे हैं। आज भी वे गांवों और शहरों में गाये जाते हैं, लेकिन 'ज्ञानेश्वरी' की अपनी जगह है। ज्ञान और भक्ति का ऐसा सुंदर मिलन गीता की किसी भी दूसरी टीका में देखने को नहीं मिलता। वह अपने नाम की तरह सचमुच भाव-अर्थ-दीपिका यानी भावों का अर्थ बतानेवाला ग्रंथ है।

: ५ :

'ज्ञानेश्वरी' की तरह ज्ञानेश्वर महाराज ने 'अमृतानुभव' और 'चांगदेव पासष्टी' जैसे और भी दो ग्रंथ लिखे हैं। 'अमृतानुभव' में वे बातें बताई गई हैं, जो 'ज्ञानेश्वरी' में नहीं हैं। यह उनकी मौलिक रचना है। इसका रहस्यवाद या छायावाद एक विशेष वाद है,

इसलिए कुछ लोग इसे तत्त्वज्ञान की दृष्टि से 'ज्ञानेश्वरी' से भी अधिक ऊंचा ग्रंथ समझते हैं। इसकी गहराई में जाकर अर्थ समझनेवाले बहुत कम लोग पाए जाते हैं।

'चांगदेव पासष्टी' की कहानी बड़ी रोचक है।

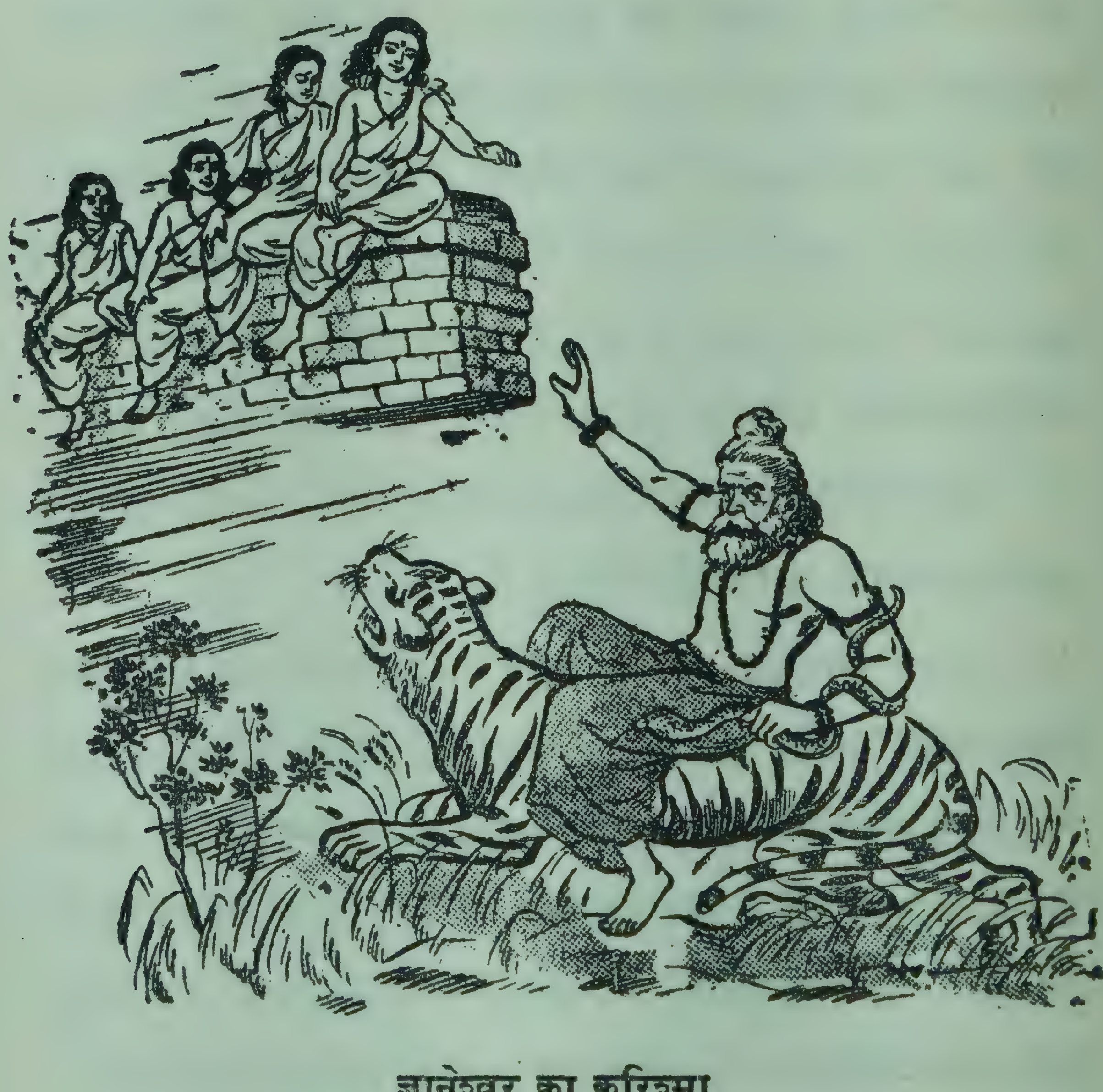
गोदावरी नदी के किनारे चांगदेव नाम के एक बड़े योगी रहते थे। उनकी उम्र चौदहसौ बरस की थी। उन्होंने ज्ञानेश्वर की कीर्ति सुनी तो बड़े अचंभे में पड़ गए। उन्होंने सोचा कि ज्ञानेश्वर को एक पत्र लिखना चाहिए। इसलिए वह पत्र लिखने बैठ गए। मगर सवाल यह उठा कि शुरू में क्या लिखें। अगर छोटा जानकर चिरंजीवी लिखते तो ज्ञान में वह बड़े थे और अगर बड़ा जानकर लिखते तो उम्र में बहुत छोटे थे। आखिर उन्होंने कोरा कागज ही ज्ञानेश्वर के पास भेज दिया।

वह कागज देखकर मुक्ताबाई बोली, "भैया, यह बूढ़े बाबा अबतक कोरे ही रहे हैं!"

मगर ज्ञानदेव ने उस कोरे कागज में भी अर्थ देख लिया और उनके जवाब में पैंसठ ओवियाँ लिखीं। यही 'चांगदेव पासष्टी' है। इसमें बहुत ही सुंदर ढंग से ज्ञानदेव ने अद्वैत दर्शन का विवेचन किया है। 'ज्ञानेश्वरी' का सार 'अमृतानुभव' में और 'अमृतानुभव' का सार 'चांगदेव पासष्टी' में आया है, ऐसा माना जाता है।

ये ओवियां पढ़कर चांगदेव को ज्ञानेश्वर से मिलने की इच्छा हुई। साथ ही उनको ऐसा लगा कि अपने योग की कुछ झलक ज्ञानेश्वर को दिखानी चाहिए। इसलिए वह बड़े भयावने शेर पर सवार हो गए और एक काले नाग को चाबुक की तरह हाथ में पकड़कर बड़ी शान से आलंदी पहुंचे।

उस समय ज्ञानेश्वर अपने भाई-बहनों के साथ एक



ज्ञानेश्वर का करिश्मा

टूटी दीवार पर बैठकर धूप खा रहे थे। जब उन्होंने चांगदेव को शेर पर सवार होकर आते देखा तो उनको लगा कि हमें भी उन्हींके ढंग से उनकी अगवानी करनी चाहिए। इसलिए उन्होंने दीवार से कहा, "चलो, हम लोगों को इसी तरह लेकर तुम आगे बढ़ो!"

और सचमुच वह दीवार चलने लगी। जब चांगदेव ने यह करिश्मा देखा तो उनकी आंखें खुल गईं और ज्ञानेश्वर के पैर पकड़कर उन्होंने क्षमा मांगी। चौदह-सौ बरस का यह बूढ़ा सोलह बरस के बच्चे का शिष्य बन गया।

: ६ :

जब लिखने-पढ़ने का काम पूरा हुआ तो ज्ञानदेव महाराज को ऐसा लगा कि अब तीर्थयात्रा करनी चाहिए। इसलिए वह अपने भाई-बहनों के साथ काशी, द्वारिका, जगन्नाथपुरी आदि की यात्रा के लिए निकल पड़े। उनके साथ उस जमाने के सभी श्रेष्ठ मराठी संत हो गए। संत नामदेव, नरहरि सोनार, चोखा मेळा, विसोबा खेचर, गोरा कुंभार, चांगदेव, जनाबाई, सावंता माळी आदि सभी जाति के संत उनके साथ थे। इस प्रकार यह भक्तों का मेला खुद ही बड़ी यात्रा थी। इस तीर्थयात्रा में नामदेव और ज्ञानदेव ने भक्ति-

प्रेम का सुख खूब लूटा। नामदेव भक्तिरूप थे तो ज्ञानदेव ज्ञानरूप। इस तरह ज्ञान और भक्ति का मिलाप होगया। ऐसा अनुमान किया जाता है कि ज्ञानेश्वर महाराज ने अपने सारे अभंग इसी यात्रा में लिखे।

उन दिनों पंढरपुर का महत्त्व आज से भी अधिक था। इसलिए सारे देश में घूम-फिरकर यह मंडली पंढरपुर में जमा होगई और वहांपर यात्रा समाप्त करके ज्ञानेश्वर आदि आलंदी लौट आए।

अब ज्ञानेश्वर महाराज ने जीते-जी अपनेको गाड़ लेने का विचार प्रकट किया। इस संबंध में संत नामदेव ने जो अभंग लिखे हैं, उन्हें पढ़ते समय आज भी हमारी आँखें भर आती हैं। कार्तिक बदी १३, संवत् १३५२ (२५ अक्तूबर, १२९६) को समाधि की तिथि तय होगई। जब वह घड़ी आ पहुंची तो ज्ञानेश्वर के गुरू एवं भाई निवृत्तिनाथ का भी गला भर आया, उनके मुंह से कोई शब्द न निकला। मुक्ताबाई तो फूट-फूटकर रोने लगी। सारा गांव जमा होगया। सबकी आंखों से आंसुओं की झड़ी लगी हुई थी।

पर इन सब बातों का ज्ञानेश्वर महाराज

पर कोई असर न हुआ। उन्होंने स्नान किया, अपने गुरू निवृत्तिनाथ के चरण छुए और सबसे विदा लेकर पहले से तैयार की हुई समाधि के अंदर जा बैठे। जब उन्होंने आसन जमाकर आंखें मूंद लीं तो निवृत्तिनाथ ने समाधि के मुंह पर शिला रखकर उसे बंद कर दिया।

इस समय ज्ञानेश्वर महाराज की उम्र केवल इक्कीस साल की थी।

ज्ञानेश्वर महाराज को दुनिया ने बहुत सताया, बहुत दुःख दिया, पर उन्होंने अपने मन में कभी किसी-का बुरा न चाहा और न उनकी लेखनी से क्रोध का कोई शब्द निकला। उनका हृदय मानो मां का था। इसीलिए महाराष्ट्र में उनको 'ज्ञानोबा माउली' (मां ज्ञानेश्वर) कहा जाता है। ज्ञानेश्वर महाराज की पुस्तकें पढ़ने पर पता चलता है कि वह केवल महा-राष्ट्र की ही नहीं, बल्कि सारी मानव-जाति की माँ थे।

'मंडल' के प्राप्य प्रकाशन

- आत्मकथा (गांधीजी) ४)
- प्रार्थना-प्रवचन (२ भाग) ,, ५।।)
- गीता-माता ,, ४)
- पंद्रह अगस्त के बाद ,, १।।), २)
- द० अफ्रीका का सत्याग्रह ३।।)
- मेरे समकालीन ,, ५)
- आत्म-संयम ,, ३)
- गीता-बोध ,, ।।)
- अनासक्तियोग ,, १।।)
- ग्राम-सेवा ,, ।=)
- मंगल-प्रभात ,, ।=)
- सर्वोदय , ।=)
- नीति-धर्म ,, ।=)
- आश्रमवासियों से ,, ।=)
- हमारी मांग ,, १)
- सत्यवीर की कथा ,, ।)
- संक्षिप्त आत्मकथा ,, १) १।।)
- हिंद-स्वराज्य ,, ।।।)
- अनीति की राह पर ,, १)
- बापू की सीख ,, ।।)
- गांधी-शिक्षा (तीन भाग) १=)
- आज का विचार (दो भाग) ।।।)
- ब्रह्मचर्य (दो भाग) ,, १।।)
- गांधीजी ने कहा था (३ भाग) ।।।)
- शान्ति यात्रा (विनोबा) १।।)
- विनोबा के विचार (२ भाग) ३)
- गीता-प्रवचन ,, १), १।।)
- जीवन और शिक्षण ,, २)
- स्थितप्रज्ञ-दर्शन ,, १)
- ईशावास्यवृत्ति ,, ।।।)
- ईशावास्योपनिषद् ,, =)
- सर्वोदय-विचार ,, १=)
- स्वराज्य-शास्त्र ,, ।।)
- गांधीजी को श्रद्धांजलि ,, ।=)
- भूदान-यज्ञ (विनोबा) ।)
- राजघाट की संनिधि में (विनोबा) ।।)
- विचार-पोथी ,, १)
- सर्वोदय का घोषणा-पत्र ,, ।)
- जमाने की मांग ,, =)
- उपनिषदों का अध्ययन ,, १)
- मेरी कहानी (नेहरू) ८)
- मेरी कहानी संक्षिप्त ,, २।।)
- हिन्दुस्तान की समस्याएं ,, २)
- लड़खड़ाती दुनिया ,, २)
- राष्ट्रपिता ,, २)
- राजनीति से दूर ,, २)
- हमारी समस्याएं ,, ।।।)
- विश्व-इतिहास की झलक २१)
- सं० हिंदुस्तान की कहानी ५)
- नया भारत ,, ।)
- आजादी के आठ साल ,, ।)
- गांधीजी की देन (रा० प्र०) १।।)
- गांधी-मार्ग ,, =)
- महाभारत-कथा (राजाजी) ५)
- कुब्जा-सुंदरी ,, ३)
- शिशु-पालन ,, ।)
- मैं भूल नहीं सकता (काटजू) २।।
- कारावास-कहानी (सु. नैयर) १)
- गांधी की कहानी (फिशर) ४)
- भारत-विभाजन की कहानी ४)
- बापू के चरणों में २।।)
- इंग्लैंड में गांधीजी २)
- बा, बापू और भाई ।।)
- गांधी-विचार-दोहन १।।)
- सत्याग्रह-मीमांसा ३।।)
- बुद्ध-वाणी (वियोगी हरि) १)
- संत-सुधासार ,, ११)
- श्रद्धाकण ,, १)
- अयोध्याकाण्ड ,, १)
- भागवत-धर्म (हरिभाऊ) ५।।)

श्रेयार्थी जमनालालजी (ह. उ.) ६॥)
स्वतंत्रता की ओर „ ४)
बापू के आश्रम में „ १)
मानवता के झरने (मावलंकर) १॥)
बापू (घ० बिड़ला) २)
रूप और स्वरूप „ ॥=)
डायरी के पन्ने „ १)
ध्रुवोपाख्यान „ ।)
स्त्री और पुरुष (टालस्टाय) १)
मेरी मुक्ति की कहानी „ १॥)
प्रेम में भगवान „ २)
जीवन-साधना „ १।)
कलवार की करतूत „ ।)
हमारे जमाने की गुलामी „ ।॥)
बुराई कैसे मिटे ? „ १)
बालकों का विवेक „ ॥)
हम करें क्या ? „ ३॥)
धर्म और सदाचार „ १।)
अंधेरे में उजाला „ १॥)
ईसा की सिखावन „ १)
कल्पवृक्ष (वा० अग्रवाल) २)
लोक-जीवन (कालेलकर) ३॥)
साहित्य और जीवन २)
कब्ज (म० प्र० पोद्दार) १)
हिमालय की गोद में „ २)
कहावतों की कहानियाँ „ २)
राजनीति-प्रवेशिका १)
जीवन-संदेश (ख० जिब्रान) १।)
अशोक के फूल ३)
जीवन-प्रभात ५)
कांग्रेस का इतिहास (२ भाग) २०)
पंचदशी २)
सप्तदशी १॥)
रीढ़ की हड्डी १॥)
अमिट रेखाएँ ३)
नवप्रभात (नाटक) १)
कृषि-ज्ञान-कोष ४)
प्रकाश की बातें १॥)

धरती और आकाश १।)
ध्वनि की लहरें १॥)
मेरी जीवन-यात्रा २)
एक आदर्श महिला १)
राष्ट्रीय गीत ।)
तामिल-वेद (तिरुवल्लुवर) १॥)
थेरी-गाथाएँ १॥)
बुद्ध और बौद्ध साधक १॥)
जातक-कथा (आनंद कौ०) २॥)
हमारे गांव की कहानी १॥)
खादी द्वारा ग्राम-विकास ।॥)
साग-भाजी की खेती ३)
ग्राम-सुधार १।)
पशुओं का इलाज ॥)
चारादाना ।)
रामतीर्थ-संदेश (३ भाग) १=)
रोटी का सवाल (क्रोपा०) ३)
नवयुवकों से दो बातें „ ।=)
पुरुषार्थ (डा० भगवान्दास) ६)
काश्मीर पर हमला २)
शिष्टाचार ॥)
तट के बंधन २)
भारतीय संस्कृति ३॥)
आधुनिक भारत ५)
फलों की खेती २॥)
मैं तन्दुरुस्त हूं या बीमार ? ॥)
नवजागरण का इतिहास ३)
गांधीजी की छत्रछाया में १॥) २॥)
भागवत-कथा ३॥)
जय अमरनाथ १॥)
हमारी लोककथाएं १॥)
पुण्य की जड़ हरी (ब्रज-लोक-कथाएं) १॥)
संस्कृत-साहित्य-सौरभ (२६ पुस्तकें) प्रत्येक ।=)
समाज-विकास-माला (५६ पुस्तकें) प्रत्येक ।=)

समाज-विकास-माला की पुस्तकें

१. बद्रीनाथ
२. जंगल की सैर
३. भीष्म पितामह
४. शिवि और दधीचि
५. विनोबा और भूदान
६. कबीर के बोल
७. गांधीजी का विद्यार्थी-जीवन
८. गंगाजी
९. गौतम बुद्ध
१०. निषाद और शबरी
११. गांव सुखी, हम सुखी
१२. कितनी जमीन ?
१३. ऐसे थे सरदार
१४. चैतन्य महाप्रभु
१५. कहावतों की कहानियां
१६. सरल व्यायाम
१७. द्वारका
१८. बापू की बातें
१९. बाहुवली और नेमिनाथ
२०. तंदुरुस्ती हजार नियामत
२१. बीमारी कैसे दूर करें ?
२२. माटी की मूरत जागी
२३. गिरिधर की कुंडलियां
२४. रहीम के दोहे
२५. गीता-प्रवेशिका
२६. तुलसी-मानस-मोती
२७. दादू की वाणी
२८. नजीर की नज्में
२९. संत तुकाराम
३०. हजरत उमर
३१. बाजीप्रभु देशपांडे
३२. तिरुवल्लुवर
३३. कस्तूरबा गांधी
३४. शहद की खेती
३५. कावेरी
३६. तीर्थराज प्रयाग
३७. तेल की कहानी
३८. हम सुखी कैसे रहें ?
३९. गो-सेवा क्यों ?
४०. कैलास-मानसरोवर
४१. अच्छा किया या बुरा ?
४२. नरसी महेता
४३. पंढरपुर
४४. ख्वाजा मुईनुद्दीन चिश्ती
४५. संत ज्ञानेश्वर
४६. धरती की कहानी
४७. राजा भोज
४८. ईश्वर का मंदिर
४९. गांधीजी का संसार-प्रवेश
५०. ये थे नेताजी
५१. रामेश्वरम्
५२. कब्रों का विलाप
५३. रामकृष्ण परमहंस
५४. समर्थ रामदास
५५. मीरा के पद
५६. मिल-जुलकर काम करो
५७. कालापानी
५८. पावभर आटा

मूल्य प्रत्येक का छः आना

४५

सस्ता साहित्य मण्डल

छः आना